हैं और परस्पर द्वैष बढ़ाते है। इसलिए न केवल आर्ष ग्रन्थों का प्रचार होना चाहिए बल्कि अनार्ष ग्रन्थों के विनाश भी किया जाना चाहिए। दण्डी जी अपने चिन्तन से इस निर्णय पर पहुँचे थे कि यदि अनार्ष ग्रन्थों का विनाश भी किया जाना चाहिए। दण्डी जी अपने चिन्तन से इस निर्णय पर पहुँचे थे कि यदि अनार्ष ग्रन्थों के प्रवाह को नहीं रोका गया तो जनसाधरण आर्ष-ग्रन्थों का अध्ययन ही नहीं करेंगे। इसीलिए वे भट्टोजी आदि लोगों का नाम तक सुनना नहीं चाहते थे। किम्बदन्ती है कि पाठशाला में एक जूता रख दिया गया था, जो विद्यार्थी आता वह भट्टोजी दीक्षित के नाम पर जूता लगाता ताकि किसी के मन में उनके लिए प्रतिष्ठा का लेश मात्र भी शेष न रह जाए। कहते हैं कि एक दिन दण्डी जी ने अपने शिष्य गोपीनाथ को आदेश दिया कि इन अनार्ष-ग्रन्थों के कूड़े को यमुना में बहाकर कपड़ो सहित स्नान करके आओ। उसने पुस्तकें जल में प्रवाहित न करके घर में रख ली और वापस आकर झूठ बोल दिया। कुछ समय के बाद भेद खुला तो दण्डीजी ने तुरन्त उसे पाठशाला से निकाल दिया। यह अनार्ष ग्रन्थों के प्रचलन का ही दुष्परिणाम था कि भारतवर्ष में धर्म के नाम पर अन्धविश्वासों एवं अनेक प्रकार की कुप्रथाओं और रूढ़ियों ने घर कर लिया था। वेदादि सत्य शास्त्रों के पठन-पाठन की परम्पराएं समाप्त हो गई थी तथा जिसका जो मन करता था, अपने-अपने स्वार्थो के लिए एक अलग ही सम्प्रदाय खड़ा कर देता था। ऐसे विकट समय में मथुरा में आकर दण्डी जी ने आर्ष ग्रन्थों के प्रचार-प्रसार तथा अनार्ष ग्रन्थों के विनाश के लिए अपना अभियान आरम्भ कर दिया। तथाकथित पोंगापन्थियों द्वारा उनका विरोध होने लगा मगर दण्डी ती निःसंकोच एवं निर्भय हों कर अपने कार्य में लगे रहे। विरोधियों ने जिन विद्यार्थियों को